जोबनेर कृषि

मई 2022 वर्ष : 7 अंक : 5 प्रति अंक मूल्य 25 रूपये वार्षिक शुल्क : 250 रुपये

प्रसार शिक्षा निदेशालय

श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय

जोबनेर, जिला-जयपुर (राज.) 303 329

एकीकृत कृषि भविष्य का सर्वोत्तम विकल्प

डॉ. महेश दत्त

विभागाध्यक्ष, पशुधन उत्पादन प्रबंध विभाग

श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि एवं पशुधन दोनों अत्यंत महत्वपूर्ण है देश के कुल राजस्व का 18 हिस्सा कृषि से प्राप्त होता है जिसमें पशुपालन का हिस्सा 25 है एकीकृत कृषि प्रणाली में कृषि को पशुधन के साथ एकीकृत करके वर्षभर रोजगार पैदा करके तथा अतिरिक्त आय प्राप्त करने के लिए सदा बड़े पैमाने पर समाज को प्रदूषण मुक्त स्वास्थ्य उपज और पर्यावरण प्रदान करने के लिए रासायनिक उर्वरक व अन्य हानिकारक कृषि रसायन एवं कीटनाशकों के उपयोग को कम करना मुख्य उद्देश्य है।

एकीकृत कृषि कैसे करें :– एकीकृत कृषि प्रणाली से तात्पर्य यह है कि फसल उत्पादन को पशुधन उत्पादन के साथ उपयुक्त सामंजस्य के अंतर्गत उपयुक्त तरीके से उत्पादन करके वर्ष भर आय बढ़ाना एवं कृषि एवं पशुधन एक दूसरे के पूरक हैं जिनके बीच एक सहजीवी संबंध है जो वर्तमान में आर्थिक रूप से व्यवहारी है और लाभदायक पर्यावरण के अनुकूल है और उत्पादन की विविधता से लाभान्वित है एकीकृत कृषि प्रणाली में विभिन्न फसलों के बकरी पालन, भेड़ पालन, खरगोश पालन, मुर्गी पालन तथा मछली पालन के साथ उचित सामंजस्य के साथ ऐसे विकल्प बनाना या चुनना जिससे वर्ष भर रोजगार और अतिरिक्त आय मिलती रहे। उदाहरण के लिए मुर्गियों को सबसे ऊपर की परत में रखें तथा मल मूत्र उपयोग में लेने सुकर की निचली परतो में रखते हैं फार्म पर उपलब्ध शेष पानी का उपयोग कृषि एवं चारा फसलों के लिए किया जाता है फार्म के पानी स्त्रोत के पास ऐसे वृक्ष लगाना जिससे जिससे फल के साथ–साथ पत्तियों से हरा चारा मिलता है उत्सर्जन को बागों के साथ–साथ चारा फसलों के लिए उर्वरक के रूप में पुणे पुनःनवीनीकरण किया जा सकता है इसे ही एकीकृत कृषि कहा जाता है ऐसी खेती का मुख्य उद्देश्य यह है कि कम संसाधनों का ऐसा विकल्प बनाएं जिससे वर्ष भर उत्पादन हो आय बढ़े तथा फार्म पर ही रोजगार के अवसर वर्ष भर मिलते रहे।

एकीकृत कृषि के लाभ :– एकीकृत के वर्तमान समय की आवश्यकता है जिसके अतर्गत फसलों के साथ उन्नत पशुधन बायोगैस, वर्मी कंपोस्ट, मुर्गी पालन, बकरी पालन, सब्जी उत्पादन तथा फलदार पौधों का ऐसा सामंजस्य बनाना जिससे 20 से 50 प्रतिशत तक अधिक लाभ कमाया जा सकता है बारानी क्षेत्रों में पानी का अच्छा प्रबंध करके अधिक फसल उत्पादन किया जा सकता है जिससे न केवल आय बढ़ेगी परंतु खेत की उपजाऊ क्षमता भी बनी रहेगी।

एकीकृत कृषि की विशेषताएं :– इस प्रणाली के अंतर्गत विभिन्न घटकों का अध्ययन करके ऐसे विकल्प अपनाना जिससे मृदा की उर्वरा शक्ति में कोई कमी नहीं हो तथा फार्म पर वर्ष भर रोजगार के साथ–साथ आय को बढ़ाना इस प्रणाली में एक घटक दूसरे घटक के पूरक होते हैं यानी एक घटक दूसरे घटक के उपयोग में लाया जा सकता है जिससे आय को भी बढ़ाया जा सकता है। उदाहरण के लिए मुर्गी पालन करके बिट को मछलियों को खिलाकर मत्स्य पालन को बढ़ावा दिया जा सकता है तथा मुर्गियों के आहार के लिए फार्म पर उपलब्ध चारा, मक्का, गेहूं, बाजरा का उपयोग किया जा सकता है अतः समेकित या एकीकृत कृषि प्रणाली खेती की आधुनिक तकनीक है जहां पर खेती के साथ बागवानी, पशुपालन, मछली पालन, कुकुट पालन, आदि के विभिन्न विकल्प अपनाना जिससे आय बढ़ेगी और रोजगार बढ़ेगा।

एकीकृत मॉडल से प्राप्त आमदनी एवं उत्पादकता (तीन वर्षों के आधार पर) यह अध्ययन वर्ष 2011 में पूर्वोतर राज्यों में किया गया :–

विभिन्न विकल्प	RGYE (t/h)	कुल रिटर्न ($X10^3$ रू./है.)	शुद्ध रिटर्न (रू./है./दिन)	आमदनी सूचकांक (प्रतिशत)
क्षेत्रीय फसले	9.23	63.80	172	19.30
फसल+मछली+मुर्गी	18.61	139.50	382	67.40
फसल+मछली+बतख	15.36	114.10	313	51.50
फसल+मछली+बकरी	19.63	151.60	415	75.10
फसल+मछली+बतख+बकरी	**21.20**	**159.50**	**437**	**80.00**
फसल+मछली+डेयरी	21.80	128.50	352	60.60
फसल+मछली+मशरूम	16.56	127.90	350	60.20

पपीता में लिंग भेद एंव किस्में

डॉ. योगेन्द्र कुमार मीणा, डॉ. रेणु कुमारी गुप्ता, डॉ. सुरेश चन्द्र काटवां, डॉ. रामप्रताप एंव डॉ. सुपर्ण सिंह शेखावत

कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटपुतली, जयपुर–2, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविघालय, जोबनेर, जयपुर

पपीता एक बहुलिंगीय पौध है और इसमें अनेक प्रकार के फूल होते है। फूलों के वर्गीकरण के दृष्टिकोण से इसमें मुख्य रुप से तीन प्रकार के लिंग नर, मादा एंव उभयलिंगी पाये जाते है, इनमें से केवल मादा फूल ही स्थाई होते है। तथा लिंग परिवर्तन नही होता है। नर या उभयलिंगी पौधो का वातावरण परिवर्तन होने पर लिंग परिवर्तन हो सकता है। यदि एक पौधे पर एक से अधिक प्रकार के फूल आये तो ये अस्थाई होते है।

नर पौधे में पुष्प परागण का कार्य करते है। इसमें फल नही लगते है। ऐसे पौधों में फूल 1.0 से 1.50 मी. लम्बे डंठल से गुच्छों में निकलते है। प्रत्येक नर पुष्प छोटा, नलिकार होता है, जहां से पराग उत्पन्न होता है। ज्यादातर किस्मों में नर फूल हल्के पीले रंग के होते है तथा कभी–कभी फूलो में गंध भी होती है।

मादा पौधे में पुष्प के डंठल छोटे होते हैं तथा ये पत्तियों के कक्ष से निकलते हैं। मादा पुष्प एक या तीन फूलों के समूह में निकलते हैं। पुष्प हल्के पीले रंग के होते है इनमें पुंकेसर नही होता है। पंखुडियों के बीच में स्त्रीलिंग चक्र होता है। जिसका निचला भाग घुंडीदार होता है। यही फूल का गर्भाशय है जो बाद लगभग गोल या अण्डाकार फल के रुप में विकसित होता है। पकने के बाद फल गूदेदार, पीले से नारंगी रगं के विकसित होते है। फल के अन्दर खोखले होते हैं। जिसमें सिकुड़न लिए काले या भूरे रंग के बीज होते है।

उभयलिंगी पौधे में नर व मादा दोनों प्रकार के पुष्प भाग पाये जाते हैं। फूल 3.5 से 4.5 सेंमी. लम्बें, निचला भाग नलिकाकार तथा ऊपरी हिस्सा 5 पीली पंखुड़ियों से बना होता है। जिसमें नर व मादा भाग संयुक्त रुप से होते है। फूलों में पुमंग तथा जायागं दोनों का विकास अच्छी तरह होता है। ऐसे फूलों के अण्डाशय में पॉच धारियॉ होती है और पूंकेसर की संख्या पॉच होती है। फूलों से विकसित फल लम्बे आकार के होते है। उभयलिंगी पौधों में तापमान के उतार चढाव के अनुसार लिंग परिवर्तन भी होता है। पपीता में लिंग भेद पौध रोपण के 6–7 महिने बाद पता चलता है जब इनमें पुष्प आने लग जाते है। नये पपीता के पौधे में लिंग का पता नहीं चल पाता है। पपीता की अच्छी पैदावार के लिए प्रमाणित एंव उपयुक्त किस्म के बीज की उपलब्धता आवश्यक है।

किस्में	
अर्का सुर्या	यह सनराइज सोलो तथा पिंक फलेश स्वीट की संतती है। इसके पौधें स्त्रीलिंग प्रकृति के होते है और उनमें को नर पौधें नही होते है। इसके फलों का आकार मध्यम तथा वनज लगभग 600 से 800 ग्राम होता है। इसकी प्रति पौध उपच लगभग 55 से 65 कि.ग्रा. होती है।
रेड लैडी	ताइवान से आयतित यह प्रभेद खाने वाले पपीतों की अच्छी प्रभेदों में सें एक है। इस प्रभेद में समस्त पौधे फल देने वाले होते है। रोपण के 6–7 माह से इसमे फल आने लगते है जो कि 1.5 फीट की ऊंचाई से लगने लगते है। फल 1.5 से 2 किलोग्राम के होते है।
पूसा डवार्फ	इसमें रोपण के सांतवे माह से फल आने लगते है और फल मध्यम आकार के अंडाकार होते है तथा फलों का वजन 1.2 से 1.5 किलोग्राम तक होता है। इसकें फलो का स्वाद अच्छा होता है। एवं प्रति पेड़ 35 से 40 किलोग्राम तक फलों की पैदावार मिलती है।
पूसा नन्हा	यह एक छोटे कद वाली प्रजाती है। इसमें नर पौधे नहीं होते है। इसकें फलो का स्वाद अच्छा तथा फल आकार में बड़ा होता है। इसमें 500से 700 ग्राम तक के फल आते है। इसको बक्सों एवं ड्रमों में भी उगाया जा सकता है। प्रतिवर्ष इसमें 15 से 20 तक फल आते है।
पूसा डेलिसियस	यह किस्म फलन में सबसे अच्छी है तथा उच्च गुणवत्तायुक्त फल देती है। इसमें नर पौधे नहीं पाये जाते हैं। व्यवसायिक स्तर पर यह एक लोकप्रिय प्रभेद हैं इसमें फल लगभग 3 फीट का ऊंचाई पर लगते है फल का आकार मध्यम, फल का भार 1.5 से 2.5 किलोग्राम गूदा सुवास युक्त गहरे संतरी रंग का होता है। फल देखने में लुभावना एवं खाने में स्वादिष्ट होता है।
पूसा जायंट	पूसा का विभिन्न प्रजातियों में सें यह अधिक फल देने वाली काफी मजबूत प्रजाति है। इसके पेड़ काफी ऊंचाई तक जाता है। इसमें 3 फीट की ऊंचाई सें फल लगने लगते है।

पूसा मैजेस्टी	पेन उत्पादन के लिए यह प्रजाति अच्छी मानी जाती है। इसमे नर पौधे नही पाये जाते है। इसमे फल 2 फीट की उचाई से लगने लगते है। फल मध्यम आकार के गोल होते है तथा प्रति पेड़ 45 से 50 किलोग्राम तक फल लगते है।
कुर्ग हनीडयू	पपीते की यह एक लोकप्रिय प्रजाति है। इसमें नर पौधे नही होते है पर फलो का स्वाद अच्छा होता है तथा फल का आकार बडा होता है। प्रति पेड़ औसतन 50 किलोग्राम तक फल लगते है।

प्याज व लहसुन की खुदाई व उसका उचित भंडारण

पूनम[1], डॉ.सुभिता कुमावत[2] व मनीषा वर्मा[1]

[1]रिसच स्कॉलर, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर

[2]सहायक आचार्य, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

हमारे देश में प्याज और लहसुन हमारे दैनिक आहार का हिस्सा हैं और इसका उपयोग सब्जी और मसाले के रूप में किया जाता है। प्याज की खेती रबी और खरीफ दोनों मौसमों में की जाती है, हालांकि अधिकांश खेती रबी के रूप में की जाती है। खरीफ प्याज की खुदाई अक्टूबर–नवंबर में की जाती है यानी जून से सितंबर तक प्याज की कटाई का समय नहीं होता है। इसलिए इस अवधि के दौरान प्याज की उपलब्धता बनाए रखने और अप्रैल–मई के महीने में रबी प्याज की कटाई के दौरान कीमतों में गिरावट को रोकने के लिए प्याज का भंडारण करना आवश्यक हो जाता है।लहसुन की खेती रबी के मौसम में ही की जाती है और लहसुन की खुदाई मार्च–अप्रैल में की जाती है।इसलिए, अगली फसल आने से पहले इसे लगभग 9 से 10 महीने तक संग्रहीत किया जाता है। प्याज और लहसुन के कम श्वसन स्तर और इसके सूखे बाहरी आवरण के कारण, इसे अन्य सब्जियों की तुलना में अधिक समय तक संग्रहीत किया जा सकता है। यदि प्याज और लहसुन के भंडारण के लिए खुदाई के बाद कुछ प्रमुख कारकों और बिंदुओं पर विशेष ध्यान दिया जाए, तो निश्चित रूप से न केवल उनकी भंडारण क्षमता को बढ़ाया जा सकता है बल्कि भंडारण के दौरान होने वाले नुकसान को भी कम किया जा सकता है।प्याज और लहसुन के भंडारण के लिए किसान को इन बातों का ध्यान रखना चाहिए।

कटाई का समय

लहसुन और प्याज की पत्तियां पकने पर पीली पड़ने लगती हैं और पत्तियों में नमी की मात्रा कम होने लगती है। इसके अलावा कंद के पास पौधा कमजोर हो जाता है, फलस्वरूप पौधा गिरने लगता है।हालांकि, खरीफ प्याज की कटाई के समय पौधों की वानस्पतिक वृद्धि जारी रहती है और वायुमंडलीय तापमान में कमी के कारण प्याज के पौधे नहीं गिरते हैं। इसलिए इस मौसम के प्याज भंडारण में ज्यादा सुरक्षित नहीं हैं।

प्याज और लहसुन के कंदोंको खोदने की विधि

जिन क्षेत्रों में मिट्टी हल्की होती है वहां प्याज और लहसुन को हाथ से निकाल दिया जाता है, लेकिन भारी मिट्टी में कुदाली का प्रयोग किया जाता है। यह देखा गया है कि लहसुन के पौधे प्याज की तुलना में कमजोर और भंगुर होते हैं, इसलिए लहसुन को कुदाली से खोदना चाहिए।

प्याज–लहसुन को खोदकर सुखाना (सूरज मेंसुखाना)

खुदाई के बाद प्याज और लहसुन को पत्तियों सहित खेत में ही सुखा लेना चाहिए।पत्तियों वाले कंदों को इस तरह रखा जाना चाहिए कि अगली पंक्ति के कंद पीछे की पंक्ति के पत्तों से ढके रहें। इस अवस्था में कंदों को पत्तियों सहित 3–4 दिनों तक सूखने के लिए रख देना चाहिए। ठीक से इलाज करने से कंदों की ससुप्तावस्था अवधि बढ़ जाती है और भंडारण के दौरान अंकुरण की समस्या कम हो जाती है। यहां ध्यान देने वाली बात यह है कि लहसुन को एक–दो दिन ही सुखाना चाहिए, क्योंकि तेज धूप में ज्यादा दिन तक सुखाने से लहसुन में कई तरह की विकृति आ सकती है।

पत्तियों को सुखाने के बाद प्याज के पत्तों को इस तरह से काटा जाता है कि 2.5 से 3 सेमी. लंबी छड़ी बची है।इन कंदों को लगभग दो सप्ताह तक छाया में सुखाना चाहिए। ऐसा करने से कंदों की गर्दन के कटे हुए हिस्से सूखकर बंद हो जाते हैं और रोग कारकों से संक्रमण की संभावना कम हो जाती है। छाया में सुखाने से प्याज की बाहरी परत (स्केल) की नमी वाष्पित होकर निकलती रहती है और प्याज का रंग भी

तेज हो जाता है। लहसुन को छाया में सुखाने के बाद, यदि आवश्यक हो, तो इसकी पत्तियों को काटा जा सकता है अन्यथा, यदि पर्याप्त भंडारण प्रणाली उपलब्ध है, तो लहसुन को पत्तियों के साथ संग्रहित किया जाना चाहिए।पत्तों को काटना हो तो कम से कम 2 से 2.5 सेमी. कम्बीस्टिक रखनी चाहिए।

कंदों का आकार और ग्रेडिंग कंदों को आकार के अनुसार तीन ग्रेडिंग

छोटे, मध्यम और बड़े कंदों में अलग करके स्टोर करना अच्छा होता है। एक समान मध्यम आकार के कंदों के बीच पर्याप्त जगह होने के कारण वायु संरचना अच्छी होती है और भंडारण के दौरान नुकसान अपेक्षाकृत कम होता है। छोटे आकार के कंदों को सड़ने से अधिक नुकसान होता है, जबकि बड़े आकार के कंदों में सड़ने और अंकुरण की समस्या अधिक होती है।

प्याज और लहसुन भंडारण की पर्यावरण की स्थिति

हमारे राज्य और जिले में छोटे और सीमांत किसानों द्वारा सामान्य वायुमंडलीय परिस्थितियों में प्याज और लहसुन का भंडारण किया जाता है।भंडारण आम तौर पर अप्रैल–मई से अक्टूबर–नवंबर तक किया जाता है। इस लंबी अवधि के लिए, मई–जून के महीने में उच्च तापमान और अपेक्षाकृत कम आर्द्रता की विशेषता होती है, जिसके कारण कंदों का वजन तेजी से कम हो जाता है।

जुलाई से सितंबर के महीने में तापमान भंडारण के लिए अनुकूल रहता है, लेकिन सापेक्ष आर्द्रता अधिक रहती है, जिससे सड़न और बीमारी की संभावना बढ़ जाती है। अक्टूबर–नवंबर के महीने में तापमान में गिरावट के कारण अंकुरण की समस्या का सामना करना पड़ता है। इस प्रकार सामान्य पर्यावरणीय परिस्थितियों में भंडारण के दौरान नुकसान अधिक होता है। अतः भण्डारगृह की संरचना इस प्रकार की जानी चाहिए कि वायु संचार उचित हो, तापमान एवं आर्द्रता को यथा संभव अनुकूल रखा जा सके। इस प्रकार के भंडारण गृहों में होने वाले नुकसान को कुछ हद तक ही कम किया जा सकता है। प्याज और लहसुन को कोल्ड स्टोरेज या कोल्ड स्टोरेज में स्टोर करके नुकसान से बचा जा सकता है जहां तापमान और आर्द्रता को नियंत्रित किया जा सकता है। प्याज और लहसुन को कोल्डस्टोरेज में 8 से 9 महीने तक 2 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान और 70 प्रतिशत सापेक्ष आर्द्रता पर भंडारित किया जा सकता है।

फसल उत्पादन में समेकित पोषक तत्व प्रबंधन

प्रकाश चन्द गुर्जर*, डॉ गजानन्द जाट, आकाश तँवर* एवं सुरेश कुमार***

***विद्यावाचस्पति शोधार्थी, **सहायक आचार्य, राजस्थान कृषि महाविधालय, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय–उदयपुर**

समेकित पोषक तत्व प्रबंधन का लक्ष्य पादप पोषकों के सभी प्रमुख स्रोतों का समाकलित रूप में कुशल और आवश्यकतानुसार उपयोग है जिससे मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणवत्ताओं पर हानिकारक प्रभाव डाले बिना अधिकतम आर्थिक उत्पादन पाया जा सके। समेकित पोषक तत्व प्रबंधन सिद्धांत की आधारी संकल्पना का अर्थ लम्बे समय तक टिकाऊ फसल उत्पादकता के लिए मृदा उर्वरता को बनाए रखना और यदि हो सके, तो सुधार लाना है। समेकित पोषण आपूर्ति प्रणाली के प्रमुख उर्वरक, गोबर खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद, फसल अवशेष पुनः उपयोग किए जा सकने वाले अपशिष्ट और जैव उर्वरक हैं। उन घटकों में रासायनिक और भौतिक गुणों, पोषक निकालने की क्षमता, स्थानिक उपलब्धता, फसल विशिष्टता और फार्म स्वीकृति संबंधी बहुत विविधताएं हैं।

समेकित पोषक प्रबंधन में उर्वरक– सघन खेती के अंतर्गत उर्वरक समेकित पोषक आपूर्ति प्रणाली का सबसे महत्वपूर्ण घटक है। उर्वरक क्योंकि पिछले वर्षों में उपज में हुई 50 प्रतिशत वृद्धि के लिए उत्तरदायी हैं अतः भारतीय कृषि में उनका महत्व आने वाले समय में और अधिक बढ़ने की संभावना है। मृदा पोषक स्रोत सघन खेती को टिकाऊ नहीं रख पाएंगे क्योंकि अधिक उत्पादकता वाले धान्य आधारित फसल चक्र, जो देश के विभिन्न भागों में अपनाए जा रहे हैं, 700–900 किग्रा नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश प्रति हेक्टेयर के अतिरिक्त बहुत अधिक मात्रा में गौण और सूक्ष्म पोषक तत्वों का उपभोग कर लेते हैं।

निम्न उर्वरक उपयोग क्षमता– उर्वरक का उपभोग ही नहीं उसके उपयोग की क्षमता भी बहुत कम है। फसलों में अनुप्रयोग किए गए उर्वरकों के केवल 30–40 प्रतिशत भाग का ही उपयोग हो पाता है, शेष लीचिंग, वाष्पीकरण, बिनाइट्रीकरण, सतह से बहना, मृदाक्षरण एवं स्थिरीकरण आदि द्वारा नष्ट हो जाता है।

उच्च विश्लेषण उर्वरकों का प्रयोग– पारंपरिक निम्न विश्लेषण उर्वरकों जैसे अमोनियम सल्फेट, सिंगल सुपरफॉस्फेट, कैल्शियम, अमोनियम नाइट्रेट, पोटेशियम सल्फेट आदि विगत में नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश की

आपूर्ति के लिए उपयोग किए गए जिसके कारण अनजाने में ही गौण और सूक्ष्म पोषक तत्वों की काफी मात्रा इन उर्वरकों के साथ मृदा में चली जाती थी। आजकल रासायनिक रूप से शुद्ध उर्वरक जैसे यूरिया, डाइ अमोनियम फास्फेट और म्यूरेट ऑफ पोटाश के उपयोग पर बल दिया जा रहा है। नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम के अतिरिक्त अन्य पोषक विहीन हैं। इन उर्वरकों का निरंतर प्रयोग और गौण तथा सूक्ष्म पोषकों का उर्वरकता हीन उत्पादन प्रणालियों द्वारा भारी अवशोषण ने बहुपोषक कमियों को सामने ला दिया है। अब भारतीय मृदा के 50 प्रतिशत में जिंक और सल्फर की विभिन्न मात्राओं में कमी 125 जिलों में उल्लेखित की गई है।

उर्वरकों के साथ कार्बनिक खादों का समाकलन– कार्बनिक खादें जैसे गोबर की खाद और कम्पोस्ट पारंपरिक तौर से फसल उत्पादन और मृदा उर्वरकता तथा उपज के स्थायित्व के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। देश में गोबर की खाद और कम्पोस्ट बनाने और उपयोग की बड़ी संभावनाएं हैं।

उत्पादन पर प्रभाव– अखिल भारतीय समन्वित सस्य अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत किए गए बहुस्थानिक प्रयोगों में देखा गया है कि गोबर की खाद और उर्वरकों के समेकित उपयोग से विभिन्न फसली प्रणालियों में मृदा उर्वरकता में सुधार के कारण अधिक उत्पादन प्राप्त हुआ। परिणामों में यह भी देखा गया है कि खरीफ फसलों में गोबर की खाद के प्रयोग से उर्वरक की आवश्यकता को पूरा किया जा सकता है।

मृदा उर्वरकता पर प्रभाव– गोबर की खाद और कम्पोस्ट का उर्वरकों के साथ उपयोग जहां पादप पोषकों की आपूर्ति का सीधा साधन है वहीं अप्रत्यक्ष रूप से भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों में सुधार लाकर फसल उत्पादकता को बढ़ाता है। कई फसलों में किए गए परीक्षणों में देखा गया है कि अकेले उर्वरक प्रयोग की अपेक्षा गोबर की खाद और सिफारिश किए गए उर्वरक स्तरों से मृदा के कार्बनिक कार्बन स्तर और सूक्ष्म पोषकों की उपलब्धता में सुधार आता है। गोबर की खाद और उर्वरकों के समेकित प्रयोग से मृदा के भौतिक गुणों जैसे स्थूल घनत्व, जलधारण क्षमता, हाइड्रोलिक संचालन और सूक्ष्म जैविक गुणों जैसे एजोटोबैक्टर तथा अन्य सूक्ष्म जीवों की गणना में सुधार हुआ।

हरी खाद का उर्वरकों के साथ समाकलन– प्राचीनकाल से ही दलहनी एवं गैर–दलहनी फसलों का उपयोग हरी खाद के रूप में काफी प्रचलित रहा है। वर्तमान में सघन खेती के कारण हरी खाद का उपयोग केवल खेती योग्य भूमि के लगभग 4 प्रतिशत क्षेत्र में ही सीमित है तथा इसे अधिक व्यापक रूप से प्रचलित करने की काफी संभावनाएं हैं। हरी खाद मुख्यतः सिंचित क्षेत्र में सफल हो पाई है क्योंकि इस प्रकार की भूमि में पोषक तत्वों का खनिजीकरण तेजी से होता है। कुछ दलहनी फसलें जैसे ढ़ैंचा, सनई, सुबबूल, लोबिया, मूंग, उड़द, ग्वार आदि हरी खाद के रूप में काफी लोकप्रिय हैं हरी खाद की फसल को मुख्य फसल बोने से 8–10 दिन पहले खेत में जोत दिया जाता है। हरी खाद की फसलों को केवल वानस्पतिक वृद्धि अवस्था तक ही उगने दिया जाता है जिससे हरी खाद के कोमल पत्ते, तना आदि भूमि में जल्दी सड़–गल जाएं। यह खाद खनिज भंडारण का काम करती है जिससे खनिज तत्वों की उपलब्धता धीमी किंतु लगातार गति से बनी रहती है। हरी खाद के रूप में प्रयोग की जाने वाली फसलों सिसबेनिया रोस्ट्रेटा, ऐस्केनोमिनी ऐस्परा और ऐस्केनोमिनी इंडिका न केवल जड़ अपितु तने पर भी नाइट्रोजन यौगिकीकरण ग्रंथिका धारण करने में सक्षम है। ये दलहनी फसलें मुख्यतौर पर जलक्रांत क्षेत्रों के लिए उपयुक्त हैं, इसलिए खासतौर पर धान की फसल के लिए लाभकारी हैं। हरी खाद की फसलें भूमि में मुख्य पोषक तत्वों जैसे नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश के अतिरिक्त सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे जिंक, आयरन, मैंगनीज, कॉपर, मोलिब्डीनम आदि भी प्रदान करती हैं

फसल उत्पादन का प्रभाव–

अखिल भारतीय परीक्षणों में देखा गया है कि ढ़ैंचा या सनई की हरी खाद धान–धान्य फसल प्रणाली में उर्वरकों का उचित संपूरक है।

वर्मी कम्पोस्ट (केंचुआ खाद)– यह भूमि की उर्वराशक्ति बनाए रखने का एक प्राकृतिक तरीका है। केंचुए मिट्टी को हवादार वातायन करने में सहायक हैं। केंचुए फसलों के अवशेष, घास–फूस, कूड़ा, बची हुई शाक, फल–फूल आदि को खाकर वर्मी कम्पोस्ट में परिवर्तित करते हैं और अपनी संख्या बढ़ाते रहते हैं। वर्मी कम्पोस्ट में उपस्थित पोषक तत्व कई बातों पर निर्भर करते हैं उनमें से मुख्य हैं वर्मी कम्पोस्ट के लिए उपयोग में आने वाले फसल अवशेष की गुणवत्ता तथा उपयोग में आने वाले केंचुए की किस्म। वर्मी कम्पोस्ट से भूमि की उर्वराशक्ति में वृद्धि होती है तथा भूमि की भौतिक दशा में सुधार होता है जिसके परिणामस्वरूप फसल उत्पादकता में वृद्धि होती है।

दलहनी अन्तः फसल– अन्तः फसल के लिए कम अवधि और सीधी खड़ी दलहनी फसल अधिक उपयोगी पाई गई है। मोदीपुरम, पालमपुर एवं रांची में अकेले मक्का पर आधारित फसल प्रणाली में मक्का की अपेक्षा मक्का और उड़द की अन्तः फसल से मक्का की उपज में वृद्धि हुई, इसी प्रकार के परिणाम गन्ने में मिले। ग्रीष्म दलहनों जैसे उड़द और मूंग को बसंत में रोपित गन्ने के अन्तः फसल के रूप में उगाने से गन्ने की उपज

बढ़ी, साथ ही 4–5 कुंतल दलहन दाने/हेक्टेयर की उपज भी मिली।

दलहन अवशेषों का समायोजन– उत्तर–पश्चिम भारत में रबी फसलों की कटाई के बाद प्रायः कम अवधि वाली दलहनें उगायी जा सकती हैं। धान–गेहूं फसल प्रणाली में ग्रीष्म में मूंग की फसल से फली तोड़ने के बाद मूंग की खड़ी फसल की जुताई करके इसका प्रयोग हरी खाद के रूप में करने से धान की उपज में 10–15 प्रतिशत की वृद्धि प्राप्त की जा सकती है।

फसल अवशेषों और पुनःचक्रीय अवशिष्टों का उर्वरकों से समाकलन– भारत में फसल अवशेषों और फार्म/औद्योगिक अवशिष्टों जैसे धान अथवा गेहूं का भूसा, धान का छिलका, गन्ने के अवशेष, आलू के डंठल, कपास अवशिष्ट, प्रेस मड़, वन का कूड़ा–कचरा, जल–कुम्भी आदि के उपयोग की काफी संभावनाएं हैं। उपलब्ध अवशिष्टों का केवल एक तिहाई ही कृषि उत्पादन में उपयोग होता है।

धान्य फसल अवशेष– फसल अवशेष जैसे गेहूं के भूसे में बहुत अधिक पोषक तत्व होते हैं लेकिन मृदा में समायोजन के लिए उपलब्ध नहीं होते। उन क्षेत्रों में जहां मशीनों द्वारा गेहूं की कटाई होती है खेतों में काफी मात्रा में फसल अवशेष रह जाते हैं जो पोषक आपूर्ति के लिए पुनः चक्रित किए जा सकते हैं। धान्य फसलों द्वारा लिए गए पोषक तत्वों में औसतन 25 प्रतिशत नाइट्रोजन और फास्फोरस, 50 प्रतिशत सल्फर और 75 प्रतिशत पोटाश फसल अवशेषों में रह जाते हैं जो बहुमूल्य पोषक स्रोत हैं।

जैव उर्वरकों और रासायनिक उर्वरकों का समाकलन– जैव उर्वरक वायुमंडलीय नाइट्रोजन स्थिरीकरण में वृद्धि करते हैं और मृदा में उपस्थित फास्फोरस की उपलब्धता को फसलों के लिए बढ़ाते हैं। नाइट्रोजन की आपूर्ति बढ़ाने वाले जैव उर्वरकों में नाइट्रोजन स्थिरीकारक जीवाणु (राइजोबियम, एजोटोबैक्टर एवं एजोस्पीरिलम), नील हरित शैवाल एवं एजौला महत्वपूर्ण हैं। फास्फोरस विलयकारी जीवाणु (पीएसबी) और माइकोराइजी मृदा में उपस्थित अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील बनाकर पौधों के लिए फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ाते हैं।

राइजोबियम– दलहन एवं तिलहन फसलों जैसे सोयाबीन, मूंगफली, चना, मटर, मूंग, उड़द, मसूर में राइजोबियम के प्रयोग से पैदावार में 10–25 प्रतिशत की वृद्धि की जा सकती है। राइजोबियम की अनुक्रिया को मृदा दशा, मृदा उर्वरकता, टीके की गुणवत्ता आदि कारक प्रभावित करते हैं। दलहन फसलों में राइजोबियम दलहन सहजीवन दलहन फसल की 80 प्रतिशत नाइट्रोजन आवश्यकता पूरी कर सकता है। साधारणतः एक एकड़ क्षेत्रफल के लिए एक पैकेट राइजोबियम कल्चर की आवश्यकता होती है।

एजोटोबैक्टर– एजोटोबैक्टर केला, पपीता, आलू, प्याज, टमाटर, भिण्डी, गन्ना, कपास, तंबाकू, मक्का, ज्वार, बाजरा, गेहूं, धान आदि फसलों में प्रयोग किया जाता है। एजोटोबैक्टर स्वतंत्र रूप से पौधों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करते हैं। एजोटोबैक्टर नाइट्रोजन स्थिरीकरण के अतिरिक्त इन्डोल एसिटिक एसिड, जिब्रेलिक एसिड तथा विटामिन भी उत्पन्न करते हैं। एजोटोबैक्टर के उपयोग से उर्वरक तुल्यांकों के संदर्भ में विभिन्न फसलों को 15–20 किग्रा नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर मिलती है।

एजोस्पीरिलम– धान, गन्ना, मोटे अनाज, कपास, कद्दूवर्गीय एवं उद्यानिकी फसलों में इसका प्रयोग किया जाता है। एजोस्पीरिलम पादप जड़ों के साथ मुक्त संबंध में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करता है। इसके प्रयोग से फसलों में 10–15 प्रतिशत तक की उपज में वृद्धि होती है। राइजोबियम की अपेक्षा एजोस्पीरिलम के प्रति फसल अनुक्रियाओं में समरूपता नहीं पाई गई तथा एजोस्पीरिलम के प्रति फसलों और उनकी किस्मों, स्थान, मौसम, फसल प्रबंधन पद्धतियों, जीवाणु विभेदों, और मृदा उर्वरकता का प्रभाव पड़ा।

नील हरित शैवाल– नील हरित शैवाल धान के लिए एक महत्वपूर्ण जैव उर्वरक है। यह एक विशेष प्रकार की काई (एलगी) होती है। इसकी विभिन्न प्रजातियां पायी जाती है जिनमें नॉस्टाक, एनाबिना, आइलोसिस, साइट्रोनिया आदि प्रमुख हैं। नाइट्रोजन स्थिरीकरण केवल उन्हीं शैवालों द्वारा किया जाता है जिनमें एक विशेष प्रकार की कोशिका (हेट्रोसिस्ट) होती है। इस प्रकार के शैवाल वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण तो करते ही है, साथ–साथ अनेक प्रकार के लाभकारी एवं आवश्यक रासायनिक पदार्थ जैसे विटामिन, वृद्धि नियामक, अमीनो अम्ल इत्यादि भी अवमुक्त करते हैं। धान की फसल की रोपाई के एक से दो सप्ताह (7–10 दिन) के अंदर नील हरित शैवाल को पूरे खेत में बराबर मात्रा में बिखेर देना चाहिए। ध्यान रखने की बात यह है कि नील हरित शैवाल के प्रयोग के बाद कम से कम 15–20 दिन तक फसल में पानी भरा रहना चाहिए, जिससे शैवाल पूरे खेत में फैल सके। 10 किग्रा सूखा नील हरित शैवाल का चूर्ण एक हेक्टेयर धान की फसल के लिए पर्याप्त होता है तथा 100–200 किग्रा ताजी नील हरित शैवाल की आवश्यकता होती है। नील हरित शैवाल के प्रयोग से धान में 25–30 किग्रा उर्वरक नाइट्रोजन के बराबर नाइट्रोजन मिलती है और उपज में 10–15 प्रतिशत की वृद्धि होती है। इसके प्रयोग से मृदा में फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ती है तथा अम्लीय भूमि में आयरन की विषाक्तता कम होती है।

फास्फोरस विलयकारी जीवाणु (पीएसबी वैम)–
ये सूक्ष्म जीवाणु निम्न पीएच मान के कार्बनिक अम्ल छोड़ते हैं जिससे मृदा में उपस्थित अघुलनशील फास्फोरस घुलनशील फास्फोरस में परिवर्तित हो जाता है और फसल के लिए उपलब्ध होता है। इसके उपयोग से फास्फोरस की उपलब्धता में 10–30 प्रतिशत की वृद्धि होती है। पीएसबी कल्चर का प्रयोग धान, गेहूं, चना, मटर, आलू, गन्ना आदि फसलों में बहुत उपयोगी पाया गया है। वेसीकुलर आरबस्कुलर माइकाराइजी (वैम) जो पादप जड़ों और विशेष कवकों के सहजीवन का प्रकार है, फसलों में फास्फोरस की उपलब्धता और अधिग्रहण को बढ़ाता है।

जैव उर्वरकों की प्रयोग विधि– राइजोबियम, एजोटोबेक्टर, एजोस्पीरिलम व फास्फोरस विलयकारी सूक्ष्म जीवों को निम्न विधियों से प्रयोग किया जा सकता है।

बीज उपचार– एक पैकेट (200 ग्रा.) जैव उर्वरक का आधा लीटर पानी और 50 ग्राम गुड़ में घोल बनाकर 10–12 किग्रा के साथ अच्छी तरह मिलाकर किसी छायादार स्थान में सुखाने के तुरंत बाद ठंडे समय (सुबह) में बुवाई करें।

पौध (रोपणी) उपचार– धान, सब्जियों की पौध या गन्ना, आलू आदि के टुकड़े जिन्हें बीज के रूप में काम लिया जाना है, उनमें एक से तीन किग्रा (5–15 पैकेट) जैव उर्वरक को लगभग 50 लीटर पानी के घोल में 5–10 मिनट तक डुबोकर रोपाई करें।

भूमि उपचार– इस विधि में 100–125 किग्रा अच्छी सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट में 10–12 किग्रा जैव उर्वरक मिलाकर खेत की तैयारी के समय भूमि में मिलाएं। खड़ी फसल में भी जैव उर्वरक का प्रयोग किया जा सकता है। इसके लिए सिंचाई से पहले या बाद में जैव उर्वरक को साफ व भुरभुरी मिट्टी में मिलाकर समान रूप से खड़ी फसल में बिखेर दें।

प्रो. सुदेश कुमार
प्रसार शिक्षा निदेशक

निदेशक की कलम से
मई माह में कृषि कार्य

प्रिय किसान भाईयों,

ग्रीष्मकालीन जुताई करने से जमीन के अन्दर पड़े हानिकारक कीट, रोगाणु एवं सूत्रकृमि जमीन की सतह पर आकर तेज धूप से नष्ट हो जाते हैं। इस तरह आगामी खरीफ की फसल में कीट एवं रोगों का प्रकोप कम हो जाता है। अतः ग्रीष्मकालीन जुताई किसान भाई अवश्य करें। जायद मूंग में दाना बनते समय हल्की सिंचाई करें। फलियों को चटखने से पहले तुड़ाई कर लेनी चाहिए। कुष्माण्ड कुल की सब्जियों जैसे लौकी, कद्दू, तुरई, टिण्डा इत्यादि में फूल एवं फल गिरने की समस्या बार–बार तापमान में परिवर्तन एवं अनियमित तथा अधिक सिंचाई के कारण होती है। अतः इन फसलों में नियमित एवं हल्की सिंचाई करे तथा वृद्धि नियामक प्लेनोफिक्स का 0.3 मि. ली. प्रति 15 लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। नींबू के डाइबैक से ग्रसित पौधों में सूखी टहनियां काटें एवं कटे हुए भाग पर कॉपर आक्सीक्लोराइड का पेस्ट लगावें। पौधों पर कॉपर आक्सीक्लोराइड 3 ग्राम या मैन्कोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। फूलगोभी की अगेती किस्मों जैसे अर्ली पटना या अर्ली कुंवारी की नर्सरी में बुवाई करें। एक हैक्टेयर क्षेत्र के लिए 600–750 ग्राम बीज पर्याप्त रहता है। पपीते की नर्सरी तैयार करने के लिए किस्में–हनीड्यू, कुर्ग हनीड्यू, पूसा डिलिसियस, पूसा नन्हा एवं सी.ओ.–2 में से किस्म का चयन करें। पपीते की पौध तैयार करने के लिये जुताई करके खाद डालकर खेत में उंची उठी क्यारिया तैयार करे। बीजों को 10 सेंटीमीटर की कतारों में 2 सेंटीमीटर की दुरी पर लगभग 1–1.5 सेंटीमीटर की गहराई पर बुवाई करें। तरबूज व खरबूज के फलो के पकने पर तूड़ाई करें। फल के पास के तन्तु का सुखना, बजाने पर थोथी आवाज आना आदि फलो के पकने का संकेत है पानी देने के 12–14 घंटे तक फलो की तुड़ाई न करें। डेयरी पशुओं के अधिक उत्पादन के लिए हरा चारा उगायें। पशुओं को गलघोटू,लंगड़ा बुखार व फड़किया से बचाव के लिए अनुभवी पशुचिकित्सक से टीके अवश्य लगवायें। पाईका ग्रस्त पशुओं के कीड़े मारने की दवा देकर लवण मिश्रण आहार प्रदान करें ताकी पाईका रोग से छुटकारा मिल सकें।

प्रमुख संरक्षक	:	प्रो. जे.एस. सन्धु
संरक्षण	:	डॉ. सुदेश कुमार
समन्यवक	:	डॉ. (श्रीमति) राजेन्द्रा राठौड़
प्रधान सम्पादक	:	डॉ. के.सी. कुमावत
तकनीकी परामर्श	:	डॉ. महेश दत्त
		डॉ. एम.आर. चौधरी
		डॉ. आर.पी. घासोलिया
		डॉ. डी.के. जाजोरिया
संकलन एवं सम्पादक	:	डॉ. सन्तोष देवी सामोता

बुक पोस्ट

डाक टिकट

पत्रिका सम्बन्धी आप अपने सुझाव, आलेख एवं अन्य कृषि सम्बन्धी नवीनतम जानकारियाँ हमारे मेल jobnerkrishi@sknau.ac.in पर भेजे।

प्रकाशक एवं मुद्रक निदेशालय, प्रसार शिक्षा, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर के लिए हरिहर प्रिन्टर्स, जयपुर से मुद्रित।